गायत्री का स्वरूप और रहस्य

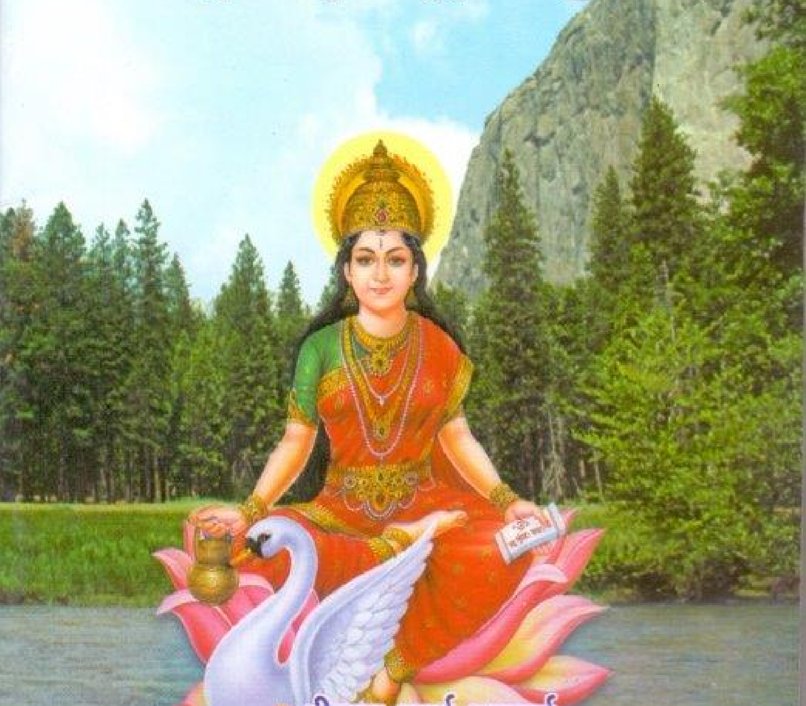

श्रीराम शर्मा आचार्य

गायत्री का स्वरूप और रहस्य

वेदमाता गायत्री की उत्पत्ति

वेद कहते हैं ज्ञान को। ज्ञान के चार भेद हैं- ऋक्, यजु, साम और अथर्व। कल्याण, प्रभु-प्राप्ति, ईश्वर-दर्शन, दिव्यत्व, आत्म-शान्ति, ब्रह्म-निर्वाण, धर्म भावना, कर्त्तव्य-पालन, प्रेम, तप, दया, उपकार, उदारता, सेवा आदि 'ऋक्' के अन्तर्गत आते हैं। पराक्रम, पुरुषार्थ, साहस, वीरता, रक्षा, आक्रमण, नेतृत्व, यज्ञ, विजय, पद, प्रतिष्ठा यह सब 'यजुः' के अन्तर्गत हैं। क्रीड़ा, विनोद, मनोरंजन, संगीत, कला, साहित्य, स्पर्श, इन्द्रियों के स्थूल भोग तथा उन भोगों का चिन्तन, प्रिय कल्पना, खेल, गतिशीलता, रुचि, तृप्ति आदि को 'साम' के अन्तर्गत लिया जाता है। धन-वैभव, वस्तुओं का संग्रह, शस्त्र, औषधि, अन्न, वस्त्र, धातु, गृह, वाहन आदि सुख साधनों की सामग्रियाँ अथर्व की परिधि में आती हैं।

किसी भी जाति, प्राणधारी को लीजिए, उसकी सूक्ष्म और स्थूल, बाहरी और भीतरी क्रियाओं और कल्पनाओं का गम्भीर एवं वैज्ञानिक विश्लेषण कीजिए, प्रतीत होगा कि इन्हीं चार क्षेत्रों के अन्तर्गत उसकी समस्त चेतना परिभ्रमण कर रही है (१) ऋक् कल्याण, (२) यजुः पौरुष, (३) साम क्रीड़ा, (४) अथर्व अर्थ- इन चार दिशाओं के अतिरिक्त प्राणियों की ज्ञान धारा और किसी ओर प्रवाहित नहीं होती। ऋक् को धर्म, यजुः को मोक्ष, साम को काम, अथर्व को अर्थ भी कहा जाता है। यही चार ब्रह्माजी के मुख होते हुए भी चार प्रकार की ज्ञानधारा का निष्क्रमण करते हैं। वेद शब्द का अर्थ- 'ज्ञान'। इस प्रकार वह एक है; परन्तु एक होते हुए भी वह प्राणियों के अन्तःकरण में चार प्रकार का दिखाई देता है। इसलिए एक वेद को सुविधा के लिए चार भागों में विभक्त कर दिया गया है। भगवान् विष्णु की चार भुजायें भी यही हैं। इन चार विभागों को स्वेच्छापूर्वक करने के लिए चार आश्रम और चार वर्णों की व्यवस्था की गई।

बालक क्रीड़ावस्था में, तरुण अर्थावस्था में, वानप्रस्थ पौरुषावस्था में और कल्याणावस्था में संन्यासी रहता है। ब्राह्मण ऋक् है, क्षत्री यजु: है, वैश्य अथर्व है, शूद्र साम। इस प्रकार यह चतुर्विध विभागीकरण हुआ।

यह चारों प्रकार के ज्ञान उस एक चैतन्य शक्ति के ही प्रस्फुरण हैं, जो सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्माजी ने उत्पन्न की थी और जिसे शास्त्रकारों ने गायत्री नाम से सम्बोधित किया है। इस प्रकार चारों वेदों की माता गायत्री हुई। इसी से उसे 'वेदमाता' भी कहा गया। जिस प्रकार जल तत्त्व को बर्फ, भाप (बादल, ओस, कुहरा आदि), वायु (हाइड्रोजन, ऑक्सीजन) तथा पतले पानी के चार रूपों में देखा जाता है। जिस प्रकार अग्नि तत्त्व को ज्वलन, गर्मी, प्रकाश तथा गति के रूप में देखा जाता है, उसी प्रकार एक ज्ञान गायत्री के ४ वेदों के चार रूपों में दर्शन होते हैं। गायत्री माता है, तो वेद उसके चार पुत्र हैं।

यह तो हुआ सूक्ष्म गायत्री का, सूक्ष्म वेदमाता का स्वरूप। अब उसके स्थूल रूप पर विचार करेंगे। ब्रह्मा ने चार वेदों की रचना से पूर्व चौबीस अक्षर वाले गायत्री मंत्र की रचना की। इस एक मन्त्र के एक-एक अक्षर में ऐसे सूक्ष्म तत्त्व आधारित किये, जिनके पल्लवित होने पर चारों वेदों की शाखा-प्रशाखाएँ तथा त्रुटियाँ उद्भूत हो गयीं। एक बीज के गर्भ में महान् वट वृक्ष छिपा होता है। जब वह बीज के रूप में उगता है, तो उसमें असंख्य शाखायें, टहनियाँ, पत्ते,फूल-फल लद जाते हैं। उन सबका इतना बड़ा विस्तार होता है। जो उस मूल वट बीज की अपेक्षा करोड़ों-अरबों गुना बड़ा होता है। गायत्री के चौबीस अक्षर भी ऐसे ही बीज हैं, जो प्रस्फुटित होकर वेदों के महा विस्तार के रूप में अवस्थित हो गये।

व्याकरण शास्त्र का उद्गम शङ्करजी के वे चौदह सूत्र हैं। जो उनके डमरू से निकले हैं। एक बार महादेवजी ने आनन्द मग्न होकर अपना प्रिय वाद्य डमरू बजाया। उस डमरू में से १४ ध्वनियाँ निकलीं। इन- (अइउण, ऋलृक्, एओङ; ऐऔच, हयवरट्, लण आदि) १४ सूत्रों को लेकर पाणिनि ने महाव्याकरण शास्त्र रच डाला। उस रचना के पश्चात् उसकी व्याख्याएँ होते-होते आज इतना

बड़ा व्याकरण शास्त्र प्रस्तुत है, जिनका एक भारी संग्रहालय बन सकता है। गायत्री मन्त्र के चौबीस अक्षरों से इसी प्रकार वैदिक साहित्यों के अंग-प्रत्यंग का प्रादुर्भाव हुआ है। गायत्री सूत्र है तो ऋचायें उसकी विस्तृत व्याख्या।

ब्रह्म की स्फुरणा से गायत्री का प्रादुर्भाव

अनादि परमात्म तत्त्व ब्रह्म से सब कुछ उत्पन्न हुआ है। सृष्टि उत्पन्न करने का विचार उठते ही ब्रह्म में एक स्फुरणा हुई, जिसका नाम है-शक्ति। शक्ति के द्वारा दो प्रकार की सृष्टि हुई। एक जड़, दूसरी चैतन्य। जड़ शक्ति का संचालन करने वाली शक्ति प्रकृति और चैतन्य सृष्टि को उत्पन्न करने वाली शक्ति का नाम सावित्री है।

पुराणों में वर्णन मिलता है कि सृष्टि के आदि काल में भगवान् की नाभि में से कमल उत्पन्न हुआ। कमल के पुष्प से ब्रह्मा हुए, ब्रह्मा से सावित्री हुई, सावित्री और ब्रह्मा के संयोग से चारों वेद उत्पन्न हुए। वेद से समस्त प्रकार के ज्ञान का उद्भव हुआ। तदनन्तर ब्रह्माजी ने पंच भौतिक सृष्टि रचना की। इस आलंकारिक गाथा का रहस्य यह है कि निर्लिप्त, निर्विकार, निर्विकल्प परमात्मतत्त्व की नाभि में से, केन्द्र भूमि में से-अन्तःकरण में से कमल उत्पन्न हुआ। श्रुति ने कहा कि सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा की इच्छा हुई कि 'एकोऽहम् बहुस्याम्' मैं एक से बहुत हो जाऊँ। यह उसकी इच्छा स्फुरणा नाभि में से निकल कर स्फुटित हुई अर्थात् कमल की लतिका उत्पन्न हुई और उसकी कली खिल गई।

इस कमल पुष्प पर ब्रह्माजी उत्पन्न होते हैं। यह ब्रह्मा सृष्टि निर्माण की त्रिदेव शक्ति का प्रथम अंश है। आगे चलकर यह त्रिदेव शक्ति उत्पत्ति, स्थिति और नाश का कार्य करती हुई ब्रह्मा, विष्णु, महेश के रूप में दृष्टिगोचर होती है। आरम्भ में कमल पुष्प पर केवल ब्रह्माजी प्रकट होते हैं, क्योंकि सर्वप्रथम उत्पत्ति करने वाली शक्ति की आवश्यकता हुई।

अब ब्रह्माजी का कार्य आरम्भ होता है। उन्होंने दो प्रकार की सृष्टि उत्पन्न की, एक चैतन्य, दूसरी जड़। चैतन्य सृष्टि के अन्तर्गत सभी जीव आ जाते

हैं, जिनमें इच्छा, अनुभूति तथा अहं भावना पाई जाती है। चैतन्य की एक स्वतंत्र सृष्टि है, जिसे विश्व का 'प्राणमय कोश' कहते हैं। निखिल विश्व में एक चैतन्य तत्त्व भरा हुआ है जिसे 'प्राण' नाम से पुकारा जाता है। विचार, संकल्प, भाव इस प्राण तत्त्व के तीन वर्ग हैं और सत् , रज, तम ये तीन इसके वर्ग हैं। इन्हीं तत्त्वों को लेकर आत्माओं के सूक्ष्म, कारण और लिंग शरीर बनते हैं। सभी प्रकार के प्राणी इसी प्राण-तत्त्व से चैतन्यता एवं जीवन सत्ता प्राप्त करते हैं।

जड़ सृष्टि निर्माण के लिए ब्रह्माजी ने पञ्चभूतों का निर्माण किया। पृथ्वी, जल, वायु, तेज, आकाश के द्वारा विश्व के सभी परमाणुमय पदार्थ ठोस, द्रव, गैस इन्हीं तीन रूपों में प्रकृति के परमाणु अपनी गतिविधि जारी रखते हैं। नदी, पर्वत, धातु, धरती आदि का सभी सार इन पञ्च-भौतिक परमाणुओं का खेल है, प्राणियों के स्थूल शरीर भी इन्हीं प्रकृतिजन्य पञ्चतत्त्वों के बने होते हैं।

क्रिया दोनों सृष्टि में है। प्राणमय चैतन्य सृष्टि में अहंभाव, संकल्प और प्रेरणा की गतिविधियाँ विविध रूपों में दिखाई देती हैं। भूतमय जड़ सृष्टि में शक्ति, हलचल और सत्ता इन आधारों के द्वारा विविध प्रकार के रंग-रूप, आकार-प्रकार बनते-बिगड़ते हैं। जड़ सृष्टि का आधार परमाणु और चैतन्य सृष्टि का आधार संकल्प है। दोनों ही आधार अत्यन्त सूक्ष्म और अत्यन्त बलशाली हैं, इनका नाश नहीं होता, केवल रूपान्तर होता रहता है।

जड़-चेतन सृष्टि के निर्माण में ब्रह्माजी की दो शक्तियाँ काम कर रही हैं-(१) संकल्प शक्ति (२) परमाणु शक्ति। इन दोनों में प्रथम संकल्पशक्ति की आवश्यकता हुई, क्योंकि बिना उसके चैतन्य का आविर्भाव नहीं होता और बिना चैतन्य के परमाणु का उपयोग किस लिए होगा? अचैतन्य सृष्टि तो अपने अंधकार में थी; क्योंकि न तो उसका किसी को ज्ञान होता है और न उसका कोई उपयोग होता है। चैतन्य के प्रकटीकरण की सुविधा के लिये उसकी प्रधान सामग्री के रूप में 'जड़' का उपयोग होता है। अस्तु, आरम्भ में ब्रह्माजी ने चैतन्य बनाया। ज्ञान से संकल्प का आविष्कार किया। पौराणिक भाषा में यह कहिये कि सर्वप्रथम वेदों का उद्‌घाटन हुआ।

पुराणों में वर्णन मिलता है कि ब्रह्मा के एक शरीर से एक सर्वांग-सुन्दरी तरुणी उत्पन्न हुई। वह उनके अंग से उत्पन्न होने के कारण उनकी पुत्री हुई, इसी तरुणी की सहायता से उन्होंने सृष्टि निर्माण कार्य जारी रखा। इसके पश्चात् उस अकेली रूपवती युवती को देखकर उनका मन विचलित हो गया और उन्होंने उससे पत्नी के रूप में रमण किया। इस मैथुन से मैथुनी संयोजक परमाणुमय पंच भौतिक सृष्टि उत्पन्न हुई। इस कथा के आलंकारिक रूप को, रहस्यमय पहेली को न समझ कर कई व्यक्ति अपने मन में प्राचीन तत्त्वों को उथली और अश्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। वे भूल जाते हैं कि ब्रह्मा कोई मनुष्य नहीं है और न उससे उत्पन्न हुई शक्ति पुत्री या स्त्री है और न पुरुष-स्त्री की तरह उनके बीच में समागम होता है। यहाँ तो सृष्टि निर्माण काल के एक तत्त्व को गूढ़ पहेली के रूप में आलङ्कारिक ढङ्ग से प्रस्तुत करके कवि ने अपनी कलाकारिता का परिचय दिया है।

ब्रह्मा निर्विकार परमात्मा की वह शक्ति है जो सृष्टि का निर्माण करती है। इस निर्माण कार्य को चालू करने के लिये उसकी दो भुजाएँ हैं; जिन्हें संकल्प और परमाणु शक्ति कहते हैं। संकल्प शक्ति चेतन सत्-सम्भव होने से ब्रह्मा की पुत्री है। परमाणु शक्ति स्थूल क्रियाशील एवं तम सम्भव होने से ब्रह्मा की पत्नी है। इस प्रकार गायत्री और सावित्री ब्रह्मा की पुत्री तथा पत्नी नाम से प्रसिद्ध हुईं।

गायत्री सूक्ष्म शक्तियों का स्रोत है

पिछले पृष्ठों पर बताया जा चुका है कि एक से अव्यय, निर्विकार, अजर-अमर परमात्मा की एक से अधिक हो जाने की इच्छा ही शक्ति बन गई। इस इच्छा, स्फुरणा या शक्ति को ही ब्रह्म पत्नी कहते हैं। इस प्रकार ब्रह्म एक से दो हो गया। अब उसे लक्ष्मीनारायण, सीताराम, राधेश्याम, उमा-महेश, शक्ति-शिव, माया-ब्रह्म, प्रकृति-परमेश्वर आदि नामों से पुकारने लगे।

इस शक्ति के द्वारा अनेक पदार्थों तथा प्राणियों का निर्माण होना था, इसलिए उसे भी तीन भागों में अपने को विभाजित कर देना पड़ा; ताकि अनेक

प्रकार के सम्मिश्रण तैयार हो सकें और विविध गुण, कर्म, स्वभाव वाले जड़-चेतन पदार्थ बन सकें। ब्रह्म-शक्ति के तीन टुकड़े-(१) सत्, (२) रज,(३) तम इन तीन नामों से पुकारे जाते हैं। सत् का अर्थ है- ईश्वर का दिव्य तत्त्व। तम का अर्थ-निर्जीव पदार्थों में परमाणुओं का अस्तित्व। रज का अर्थ है- जड़ पदार्थों और ईश्वरीय दिव्य तत्त्व के सम्मिश्रण से उत्पन्न हुई आनन्ददायक चैतन्यता। यह तीन तत्त्व स्थूल सृष्टि के मूल कारण हैं। इनके उपरान्त स्थूल उपादान के रूप में मिट्टी, पानी, हवा, अग्नि, आकाश- ये पाँच स्थूल तत्त्व और उत्पन्न होते हैं। इन तत्त्वों के परमाणुओं तथा उसकी शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श तन्मात्राओं द्वारा सृष्टि का सारा कार्य चलता है। प्रकृति के दो भाग हैं- सूक्ष्म प्रकृति जो शक्ति प्रवाह के रूप में, प्राण प्रकृति जिससे दृश्य पदार्थों का निर्माण होता है, परमाणुमयी है। यह मिट्टी, पानी, हवा आदि पञ्च तत्त्वों के आधार पर अपनी गतिविधि जारी रखते हैं।

उपर्युक्त पंक्ति के पाठक समझ गये होंगे कि पहले एक ब्रह्मा था उसकी स्फुरणा से आदि शक्ति का आविर्भाव हुआ, इस आदि शक्ति का नाम ही गायत्री है। जैसे ब्रह्मा ने अपने तीन भाग कर लिए (१) सत् जिसे 'ह्रीं' या सरस्वती कहते हैं। (२) रज- जिसे 'श्रीं' या लक्ष्मी कहते हैं, (३) तम- जिसे क्लीं या काली कहते हैं। वस्तुतः सत् और तम दो ही विभाग हुए थे, इन दोनों के मिलने से जो धारा उत्पन्न हुई, वह रज कहलाती है। जैसे गंगा, यमुना जहाँ मिली हैं, वहाँ उनकी मिश्रित धारा को सरस्वती कहते हैं। सरस्वती जैसी कोई पृथक् नदी नहीं है जैसे इन दो नदियों के मिलने से सरस्वती हुई, वैसे ही सत् और तम के योग से रज उत्पन्न हुआ यह त्रिविधा प्रकृति कहलाई।

अद्वैतवाद, द्वैतवाद, त्रैतवाद का बहुत झगड़ा सुना जाता है, वस्तुतः यह समझने का अन्तर मात्र है। ब्रह्म, जीव, प्रकृति यह तीनों ही अस्तित्व में हैं। पहले एक ब्रह्म था यह ठीक है, इसलिए अद्वैतवाद भी ठीक है, पीछे ब्रह्म और शक्ति दो हो गये, इसलिए द्वैतवाद भी ठीक है। प्रकृति और परमेश्वर के संस्पर्श से जो रसानुभूति और चैतन्यता मिश्रित रज सत्ता उत्पन्न हुई, वह जीव कहलाई, इस

प्रकार त्रैतवाद भी ठीक है। मुक्ति होने पर जीव सत्ता नष्ट हो जाती है। इससे भी स्पष्ट है कि जीवधारी की जो वर्तमान सत्ता मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार के ऊपर आधारित है एक मिश्रण मात्र है।

तत्त्व दर्शन के गम्भीर विषय में प्रवेश करके आत्मा के सूक्ष्म विषयों पर प्रकाश डालने का यह अवसर नहीं है। इन पंक्तियों में तो स्थूल और सूक्ष्म प्रकृति का भेद बताना था, क्योंकि विज्ञान के दो भाग यहीं से होते हैं, मनुष्यों की द्विधा प्रकृति यहीं से बनती है। पञ्च तत्त्वों द्वारा काम करने वाली स्थूल प्रकृति का अन्वेषण करने वाले मनुष्य भौतिक विज्ञानी कहलाते हैं। उन्होंने अपने बुद्धि बल से पञ्च तत्त्वों के भेद-उपभेदों को जानकर उनसे अनेक लाभदायक साधन प्राप्त किये। रसायन, कृषि, विद्युत्, वाष्प, शिल्प, संगीत, भाषा, साहित्य, वाहन, गृह-निर्माण, चिकित्सा, शासन, खगोल विद्या, शास्त्र, अस्त्र, दर्शन, भू-परिशोधन आदि अनेक प्रकार के सुख साधन खोज निकाले और रेल, मोटर, तार, डाक, रेडियो, टेलीविजन, फोटो, घड़ी आदि विविध वस्तुएँ बनाने के बड़े-बड़े यन्त्र निर्माण किये। धन, सुख, सुविधा और आराम के साधन सुलभ हुए। इन मार्गों से जो लाभ मिलता है उसे शास्त्रीय भाषा में 'प्रेय' या 'भोग' कहते हैं। यह विज्ञान भौतिक विज्ञान कहलाता है, यह स्थूल प्रकृति के उपयोग की विद्या है।

सूक्ष्म प्रकृति वह है, जो आद्य शक्ति गायत्री से उत्पन्न होकर सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा में बँटती है। यह सर्व-व्यापी शक्ति-निर्झरणी पञ्च तत्त्वों से कहीं अधिक सूक्ष्म है। जैसे नदियों के प्रवाह में जल की लहरों का वायु के आघात होने के कारण 'कलकल' से मिलती-जुलती ध्वनियाँ उठा करती हैं, वैसे ही सूक्ष्म प्रकृति की शक्ति धाराओं से तीन प्रकार की शब्द ध्वनियाँ उठती हैं।

सत् प्रवाह में 'ह्रीं' रज प्रवाह में 'श्रीं' और तम प्रवाह में 'क्लीं' शब्द से मिलती-जुलती ध्वनि उत्पन्न होती है। उससे भी सूक्ष्म ब्रह्म का ॐकार ध्वनि प्रवाह है। नादयोग की साधना करने वाले ध्यानमग्न होकर इन ध्वनियों को पकड़ते हैं। उनका सहारा पकड़ते हुए ब्रह्म सायुज्य तक जा पहुँचते हैं। यह योग-साधना पथ गायत्री महाविज्ञान के तीसरे खण्ड में पाठकों के सामने प्रस्तुत किया जायेगा।

Free Read/Download & Order 2000 books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of

प्राचीन काल में हमारे पूजनीय पूर्वजों ऋषि-मुनियों ने अपनी सुतीक्ष्ण दृष्टि से विज्ञान के इस सूक्ष्म तत्त्व को पकड़ा था। फलस्वरूप वे वर्तमान काल के यशस्वी भौतिक विज्ञान की अपेक्षा अनेक गुने लाभों से लाभान्वित होने में समर्थ हुए थे। वे आदिशक्ति के सूक्ष्म प्रवाहों पर अपना अधिकार स्थापित करते थे। यह प्रकट तथ्य है कि मनुष्य के शरीर से अनेक प्रकार की शक्तियों का आविर्भाव होता है। हमारे ऋषिगण योग द्वारा शरीर के विभिन्न भागों में छिपे पड़े हुए शक्ति केन्द्रों को, चक्रों को, ग्रन्थियों, मातृकाओं को, ज्योतियों को, भ्रमरों को जगाते थे और उस जागरण से जो शक्ति-प्रवाह उत्पन्न होता था, उसे आद्यशक्ति के विविध प्रवाहों में से जिनके साथ आवश्यकता होती थी, उसके साथ सम्बन्धित कर देते थे। जैसे किसी रेडियो का स्टेशन के ट्राँसमीटर यन्त्र से सम्बन्ध स्थापित कर दिया जाता है, तो दोनों की विद्युत् शक्ति सम श्रेणी की होने के कारण आपस में सम्बन्धित हो जाती हैं तथा उन स्टेशनों के बीच आपसी वार्तालाप का, सम्वादों के आदान-प्रदान का सिलसिला चल पड़ता है। इसी प्रकार साधना द्वारा शरीर के अन्तर्गत छिपे हुए और तन्द्रित पड़े हुए केन्द्रों का जागरण करके सूक्ष्म प्रकृति के शक्ति-प्रवाहों से सम्बन्ध स्थापित हो जाता है, तो मनुष्य और आद्यशक्ति आपस में सम्बन्धित हो जाते हैं। इस सम्बन्ध के कारण मनुष्य उस आद्य- शक्ति के गर्भ में भरे हुए रहस्यों को समझने लगता है और अपनी इच्छानुसार उसका उपयोग करके लाभान्वित हो सकता है। चूँकि संसार में जो कुछ है वह सब उस आद्यशक्ति के भीतर है, इसलिए वह सम्बन्धित शक्ति भी संसार के सब पदार्थों और साधनों से अपना सम्बन्ध स्थापित कर सकती है।

वर्तमान काल के वैज्ञानिक पञ्च तत्त्वों की सीमा तक सीमित स्थूल प्रकृति के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए बड़ी-बड़ी कीमती मशीनों का विद्युत्, वाष्प गैस, पेट्रोल आदि का प्रयोग करके कुछ आविष्कार करते हैं और थोड़ा-सा लाभ उठाते हैं। यह तरीका बड़ा श्रम साध्य और समय साध्य है। उसमें खराबी, टूट-फूट और परिवर्तन की खटपट भी आये दिन लगी रहती है। उन यंत्रों की स्थापना, सुरक्षा और निर्माण के लिए हर समय काम जारी रखना पड़ता है तथा उनका स्थान परिवर्तन तो और भी कठिन होता है। यह सब झंझट

भारतीय योग विज्ञान के विज्ञान-वेत्ताओं के सामने नहीं थे। वे बिना किसी यंत्र की सहायता के तथा बिना संचालक, पेट्रोल आदि के केवल अपने शरीर के शक्ति केन्द्रों का सम्बन्ध सूक्ष्म प्रकृति से स्थापित करके ऐसे आश्चर्यजनक कार्य कर लेते थे, जिनकी सम्भावना तक को आज के भौतिक विज्ञानी समझने में समर्थ नहीं हो पा रहे हैं।

महाभारत और लङ्का युद्ध में जो अस्त्र-शस्त्र व्यवहृत हुए थे, उनमें से बहुत थोड़ों का धुँधला रूप अभी सामने आया है। रडार, गैस, बम, अणु-बम, रोग-कीटाणु बम, परमाणु बम, मृत्यु-किरण आदि का धुँधला चित्र अभी तैयार हो पाया है। प्राचीन काल में मोहनास्त्र, ब्रह्मपाश, नागपाश, वरुणास्त्र, आग्नेय बाण। शत्रु को मारकर तरकस में लौट आने वाले बाण आदि व्यवहृत होते थे, शब्द वेध का प्रचलन था। ऐसे अन्य अस्त्र-शस्त्र किसी कीमती मशीनों से नहीं, मन्त्र बल से चलाये जाते थे। मंत्र बल से 'कृत्या' या घात चलाई जाती थी, जो शत्रु को जहाँ भी छिपा हो, ढूँढ़कर उसका संहार करती थी। लङ्का में बैठा हुआ रावण और अमेरिका में बैठा हुआ अहिरावण आपस में भली प्रकार वार्तालाप किया करते थे, उन्हें किसी रेडियो यन्त्र या ट्रान्समीटर की जरूरत न थी। विमान बिना पेट्रोल के उड़ते थे।

अष्ट सिद्धि और नव-निधियों का योग-शास्त्र में जगह-जगह पर वर्णन है। अग्नि में प्रवेश करना, जल पर चलना, वायु के समान तेज दौड़ना, अदृश्य हो जाना, मनुष्य से पशु-पक्षी और पशु-पक्षी से मनुष्य का शरीर बदल लेना, शरीर को बहुत छोटा या बड़ा, बहुत हल्का या भारी बना लेना, शाप से अनिष्ट उत्पन्न कर देना, वरदानों से उत्तम लाभों की प्राप्ति, मृत्यु को रोक लेना, पुत्रेष्टि-यज्ञ, भविष्य का ज्ञान, दूसरों के अन्तस् की पहचान, क्षण भर में यथेच्छ धन, ऋतु, नगर, जीवजन्तु गण, दानव आदि उत्पन्न कर लेना, समस्त ब्रह्माण्ड की हलचलों से परिचित होना, किसी वस्तु का रूपान्तरण कर देना, भूख, प्यास, सर्दी-गर्मी पर विजय, आकाश में उड़ना, अनेकों आश्चर्य भरे कार्य केवल मन्त्र बल से, योग शक्ति से, अध्यात्म विज्ञान से होते थे और उन वैज्ञानिक प्रयोजनों के लिए किसी

प्रकार की मशीन, पेट्रोल, बिजली आदि की जरूरत न पड़ती थी। यह कार्य शारीरिक विद्युत् और प्रकृति के सूक्ष्म प्रवाह का सम्बन्ध स्थापित कर लेने पर बड़ी आसानी से हो जाते थे। यह भारतीय विज्ञान था, जिसका आधार था- साधना।

साधना के द्वारा केवल तम-तत्त्व से सम्बन्ध रखने वाले उपर्युक्त प्रकार के भौतिक चमत्कार ही नहीं होते वरन् रज और सत् क्षेत्र के लाभ एवं आनन्द भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त किये जा सकते हैं। हानि, शोक, वियोग, आपत्ति, रोग, आक्रमण, विरोध, आघात आदि विपन्न परिस्थितियों में पड़कर जहाँ साधारण मनोभूमि के लोग मृत्यु तुल्य मानसिक कष्ट पाते हैं, वहाँ आत्म शक्तियों के उपयोग की विद्या जानने वाला व्यक्ति विवेक, ज्ञान, वैराग्य, साहस, आशा और ईश्वर विश्वास के आधार पर इन कठिनाइयों को हँसते-हँसाते आसानी से काट लेता है और बुरी अथवा साधारण परिस्थितियों में भी अपने आनन्द को बढ़ाने का मार्ग ढूँढ़ निकालता है। वह जीवन को इतनी मस्ती, प्रफुल्लता और मजेदारी के साथ बिताता है जैसा कि बेचारे करोड़पति को भी नसीब नहीं हो सकता। जिसका शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य आत्मबल के कारण ठीक बना हुआ हो, उसे बड़े-बड़े अमीरों से भी अधिक आनन्द मय जीवन बिताने का सौभाग्य अनायास ही प्राप्त हो जाता है। रज: शक्ति का उपयोग जानने का यह लाभ भौतिक विज्ञान द्वारा मिलने वाले लाभों की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है।

'सत्' तत्त्व के लाभों का वर्णन करना तो लेखनी और वाणी दोनों की ही शक्ति के बाहर है। ईश्वरीय, दिव्य तत्त्वों की जब आत्मा में वृद्धि होती है तो दया, करुणा, प्रेम, मैत्री, त्याग, संतोष, शान्ति, सेवा-भाव, आत्मीयता, सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, संयम,नम्रता, पवित्रता, श्रमशीलता, धर्मपरायणता आदि सद्गुणों की मात्रा दिन-दिन बड़ी तेजी से ढ़ती जाती है। फलस्वरूप संसार में उसके लिए प्रशंसा, कृतज्ञता, प्रत्युपकार, श्रद्धा, सहायता, सम्मान के भाव बढ़ते हैं और उसे प्रत्युपकार से संतुष्ट करते हैं। इनके अतिरिक्त ये सद्गुण स्वयं इतने मधुर हैं, कि जिस हृदय में इनका निवास होता है, वहीं आत्म-संतोष की शीतल निर्झरणी

Free Read/Download & Order 2000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of

सदा बहती रहती है। ऐसे लोग चाहे जीवित अवस्था में हों, चाहे मृत अवस्था में, उन्हें जीवन-मुक्त, स्वर्ग, परमानन्द, आत्म-दर्शन, प्रभु-प्राप्ति, ब्रह्म निर्वाण, तुरीयावस्था, निर्विकल्प समाधि का सुख प्राप्त होता रहता है। यही तो जीवन का लक्ष्य है। इसे पाकर आत्मा परितृप्ति के आनन्द-सागर में निमग्न हो जाती है।

आत्मिक, मानसिक और सांसारिक तीनों ही प्रकार के सुख-साधन, आद्यशक्ति गायत्री की सत्, रज, तम की धाराओं तक पहुँचने वाला साधक, सुगमतापूर्वक प्राप्त कर सकता है। सरस्वती, लक्ष्मी और काली की सिद्धियाँ पृथक्-पृथक् भी की जाती हैं। पाश्चात्य देशों के भौतिक विद्वान् 'क्लीं' तत्त्व की काली शक्ति का अन्वेषण आराधना करने में निमग्न हैं। बुद्धिवादी, धर्म प्रचारक, सुधारवादी, गाँधीवादी, समाजसेवी, व्यापारिक, उद्योगी, समाजवादी, कम्युनिष्ट यह 'श्रीं' शक्ति की सुव्यवस्था में लक्ष्मी के प्रयोजनों में लगे हुए हैं। योगी, ब्रह्मवेत्ता, अध्यात्मवादी, तत्त्वदर्शी, भक्त,दार्शनिक, परमार्थी, व्यक्ति 'ह्रीं' तत्त्व की सरस्वती की आराधना कर रहे हैं। ये तीनों ही वर्ग गायत्री की आद्यशक्ति के एक-एक चरण के उपासक हैं। गायत्री को 'त्रिपदा' कहा है उसके तीन चरण हैं। यह त्रिवेणी उपर्युक्त तीनों ही प्रयोजनों को पूरा करने वाली है। माता बालक के सभी काम करती है। आवश्यकतानुसार वह उसके लिए मेहतर का, रसोइये का, कहार का, दाई का, दाता का, दर्जी का, धोबी का, चौकीदार का काम बजा देती हैं। वैसे ही जो लोग आत्मशक्ति को आद्यशक्ति के साथ जोड़ने की विद्या को जानते हैं, वे अपने को सुसन्तति सिद्ध करते हैं। वे गायत्री रूपी सर्वशक्तिमान् माता से यथेच्छ लाभ प्राप्त कर लेते हैं।

संसार में दुःखों के तीन कारण हैं- (१) अज्ञान, (२) अभाव (३) अशक्ति। इन तीनों दुःखों को गायत्री की सूक्ष्म प्रकृति की तीनों धाराओं के सदुपयोग से मिटाया जा सकता है। 'ह्रीं' अज्ञान को , 'श्रीं' अभाव को, 'क्लीं' अशक्ति को दूर करती है। भारतीय सूक्ष्म विद्या विशेषज्ञों ने सूक्ष्म प्रकृति पर अधिकार करके अभीष्ट आनन्द प्राप्त करके, जिस विज्ञान का आविष्कार किया था, वह सभी दृष्टियों से असाधारण और महान् है। उस आविष्कार का नाम है-साधना। साधना से सिद्धि मिलती है, गायत्री साधना भी अनेक सिद्धियों की जननी है।

महापुरुषों द्वारा गायत्री महिमा का गान

हिन्दू धर्म में अनेक मान्यतायें प्रचलित हैं। विविध बातों के सम्बन्ध में परस्पर विरोधी मतभेद भी हैं, पर गायत्री मन्त्र की महिमा एक ऐसा तत्त्व है, जिसे सभी ने, सभी सम्प्रदायों ने, सभी ऋषियों ने एक मत से स्वीकार किया है।

अथर्ववेद १९-७१-१ में गायत्री की स्तुति की गई है, जिसमें उसे आयु, प्राण, प्रजा, पशु, कीर्ति, धन और ब्रह्मतेज प्रदान करने वाली कहा गया है।

विश्वामित्र का कथन है कि गायत्री के समान चारों वेदों में अन्य कोई मन्त्र नहीं है। सम्पूर्ण वेद, यज्ञ, दान, तप गायत्री मन्त्र की एक कला के समान भी नहीं हैं।

भगवान् मनु का कथन है-'ब्रह्माजी ने तीनों वेदों का सार तीन चरण वाला गायत्री मन्त्र निकाला। गायत्री से बढ़कर पवित्र करने वाला और कोई मन्त्र नहीं है। जो मनुष्य नियमित रूप से तीन वर्ष तक गायत्री का जप करता है, वह ईश्वर को प्राप्त करता है। जो द्विज दोनों सन्ध्याओं में गायत्री जप करता है, वह वेद पढ़ने के फल को प्राप्त होता है। अन्य कोई साधन करे या न करे, केवल गायत्री जप से भी सिद्धि पा सकता है। नित्य एक हजार जप करने वाला पापों से वैसे ही छूट जाता है, जैसे कैंचुली से साँप छूट जाता है। जो द्विज गायत्री की उपासना नहीं करता, वह निन्दा का पात्र है।'

योगिराज याज्ञवल्क्य कहते हैं-'गायत्री और समस्त वेदों को तराजू में तोला गया। एक ओर अष्ट अङ्गों समेत वेद और दूसरी ओर गायत्री, तो गायत्री का पलड़ा भारी रहा। वेदों का सार उपनिषद् है, उपनिषदों का सार व्याहृतियों समेत गायत्री है। गायत्री वेदों की जननी है, यह पापों का नाश करने वाली है। इससे अधिक पवित्र करने वाला कोई मन्त्र स्वर्ग और पृथ्वी पर नहीं है। गंगा के समान कोई तीर्थ नहीं, केशव से श्रेष्ठ कोई देव नहीं, गायत्री से श्रेष्ठ मन्त्र न हुआ है न आगे होगा। गायत्री जान लेने वाला समस्त विद्याओं का वेत्ता, श्रेष्ठ और श्रोत्रिय हो जाता है। जो द्विज गायत्री परायण नहीं वह वेदों का पारंगत होते हुए भी शूद्र

के समान है, अन्यत्र किया हुआ उसका श्रम व्यर्थ है जो गायत्री नहीं जानता, ऐसा व्यक्ति ब्राह्मणत्व से च्युत और पापयुक्त हो जाता है।'

पाराशर जी कहते हैं- 'समस्त जप सूक्तों तथा वेद मन्त्रों में गायत्री मन्त्र परम श्रेष्ठ है। वेद और गायत्री की तुलना में गायत्री का पलड़ा भारी है। भक्तिपूर्वक गायत्री का जप करने वाला मुक्त होकर पवित्र बन जाता है। वेद- शास्त्र, पुराण-इतिहास पढ़ लेने पर भी जो गायत्री से हीन है, उसे ब्राह्मण नहीं समझना चाहिए।'

शंख ऋषि का मत है-'नरक रूपी समुद्र में गिरते हुए को हाथ पकड़ कर बचाने वाली गायत्री ही है। उससे उत्तम वस्तु स्वर्ग और पृथ्वी पर कोई नहीं है। गायत्री का ज्ञाता निःसन्देह स्वर्ग को प्राप्त करता है।'

शौनक ऋषि का मत है-'अन्य उपासनायें करे चाहे न करे, केवल गायत्री जप से द्विज जीवन-मुक्त हो जाता है, सांसारिक और पारलौकिक समस्त सुखों को पाता है, संकट के समय दस हजार जप करने से विपत्ति का निवारण होता है।'

अत्रि मुनि कहते हैं-'गायत्री आत्मा का परमशोधन करने वाली है। उसके प्रताप से कठिन दोष और दुर्गुणों का परिमार्जन हो जाता है। जो मनुष्य गायत्री तत्त्व को भली प्रकार समझ लेता है, उसके लिए इस संसार में कोई सुख शेष नहीं रह जाता।'

महर्षि व्यास जी कहते हैं- 'जिस प्रकार पुष्प का सार शहद, दूध का सार घृत, है उसी प्रकार समस्त वेदों का सार गायत्री है। सिद्ध की हुई गायत्री कामधेनु के समान है। गंगा शरीर के पापों को निर्मल करती है, गायत्री रूप ब्रह्म-गंगा से आत्मा पवित्र होती है। जो गायत्री छोड़कर अन्य उपासनाएँ करता है, वह पक्वान्न छोड़कर भिक्षा माँगने वाले के समान मूर्ख है। कर्म की सफलता, तप की वृद्धि के लिए गायत्री से श्रेष्ठ कोई साधना नहीं है।'

भारद्वाज ऋषि कहते हैं-'ब्रह्मा आदि देवता भी गायत्री जप करते हैं, वह ब्रह्म साक्षात्कार कराने वाली है। अनुचित काम करने वालों के दुर्गुण गायत्री के कारण छूट जाते हैं। गायत्री से रहित व्यक्ति शूद्र से भी अपवित्र है।'

चरक ऋषि कहते हैं- 'जो ब्रह्मचर्य पूर्वक गायत्री की उपासना करता है और आँवले के ताजे फलों का सेवन करता है, वह दीर्घजीवी होता है।'

नारद जी की उक्ति है-'गायत्री भक्ति का ही स्वरूप है। जहाँ भक्ति रूपी गायत्री है, वहाँ श्री नारायण का निवास होने में कोई सन्देह नहीं करना चाहिए।'

वसिष्ठ जी का मत है- 'मन्दमति, कुमार्गगामी और अस्थिरमति भी गायत्री के प्रभाव से उच्च पद को प्राप्त करते हैं, फिर सद्गति होना निश्चित है। जो पवित्रता और स्थिरतापूर्वक गायत्री की उपासना करते हैं, वे आत्म लाभ प्राप्त करते हैं।'

उपर्युक्त अभिमतों से मिलते-जुलते अभिमत प्राय: सभी ऋषियों के हैं। इससे स्पष्ट है कि कोई ऋषि अन्य विषयों में चाहे आपसी मतभेद रखते रहे हों, पर गायत्री के बारे में उन सब में समान श्रद्धा थी और वे सभी अपनी उपासना में उनका प्रथम स्थान रखते थे। शास्त्रों में, धर्म-ग्रन्थों में, स्मृतियों में, पुराणों में गायत्री की महिमा तथा साधना पर प्रकाश डालने वाले सहस्रों श्लोक भरे पड़े हैं। इन सबका संग्रह किया जाय तो एक बड़ा भारी गायत्री पुराण बन सकता है।

वर्तमान शताब्दी के आध्यात्मिक तथा दार्शनिक महापुरुषों ने भी गायत्री के महत्त्व को उसी प्रकार स्वीकार किया है, जैसा कि प्राचीन काल के तत्त्वदर्शी ऋषियों ने किया था। आज का युग बुद्धि और तर्क का, प्रत्यक्षवाद का युग है। इस शताब्दी के प्रभावशाली गण्यमान्य व्यक्तियों की विचारधारा केवल धर्म-ग्रन्थ या परम्पराओं पर आधारित नहीं रही है। उन्होंने बुद्धिवाद, तर्कवाद और प्रत्यक्षवाद को अपने सभी कार्यों में प्रधान स्थान दिया है। ऐसे महापुरुषों को भी गायत्री तत्त्व सब दृष्टिकोणों से परखने पर खरा सोना प्रतीत हुआ है। नीचे उनमें से कुछ के विचार देखिये-

महात्मा गाँधी कहते हैं-'गायत्री मन्त्र का निरन्तर जप रोगियों को अच्छा करने और आत्माओं की उन्नति के लिए उपयोगी है। गायत्री का स्थिरचित्त और हृदय से किया हुआ जप आपत्तिकाल में सङ्कटों को दूर करने का प्रभाव रखता है।'

लोकमान्य तिलक कहते हैं-'जिस बहुमुखी दासता के बन्धनों में भारतीय प्रजा जकड़ी हुई है, उसका अन्त राजनैतिक संघर्ष करने मात्र से न हो जायेगा। उसके लिये आत्मा के अन्दर प्रकाश उत्पन्न होना चाहिए, जिससे सत् और असत् का विवेक हो। कुमार्ग को छोड़कर श्रेष्ठ मार्ग पर चलने की प्रेरणा मिले। गायत्री मन्त्र में यही भावना विद्यमान है।'

महामना मदनमोहन मालवीय जी ने कहा- 'ऋषियों ने जो अमूल्यरत्न हमें दिये हैं, उनमें से एक अनुपम रत्न गायत्री है। गायत्री से बुद्धि पवित्र होती है। ईश्वर का प्रकाश आत्मा में आता है। इस प्रकाश से असंख्यों आत्माओं को भव-बन्धन से त्राण मिला है। गायत्री में ईश्वर-परायणता के भाव उत्पन्न करने की शक्ति है। साथ ही वह भौतिक अभावों को दूर करती है। गायत्री की उपासना ब्राह्मणों के लिए तो अत्यन्त आवश्यक है, जो ब्राह्मण गायत्री जप नहीं करता, वह अपने कर्त्तव्य-धर्म को छोड़ने का अपराधी होता है।'

कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर कहते हैं- 'भारतवर्ष को जगाने वाला जो मन्त्र है, वह इतना सरल है कि एक ही श्वास में उसका उच्चारण किया जा सकता है। वह है-गायत्री मन्त्र। इस पुनीत मन्त्र का अभ्यास करने में किसी प्रकार के तार्किक ऊहापोह, किसी प्रकार के मतभेद अथवा किसी प्रकार के बखेड़े की गुंजायश नहीं है।'

योगिराज अरविन्द घोष ने कई जगह गायत्री जप करने का निर्देश किया है, उन्होंने बताया है कि गायत्री में ऐसी शक्ति सन्निहित है, जो महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती है। उन्होंने कइयों को साधना के तौर पर गायत्री का जप बताया है।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस का उपदेश है- 'मैं लोगों से कहता हूँ कि लम्बी साधना करने की उतनी जरूरत नहीं है, इस छोटी सी गायत्री की साधना करके देखो। गायत्री का जप करने से बड़ी-बड़ी सिद्धियाँ मिल जाती हैं। यह मन्त्र छोटा है, पर इसकी शक्ति बड़ी भारी है।'

स्वामी विवेकानन्द का कथन है- 'राजा से वही वस्तु माँगी जानी चाहिए जो उसके गौरव के अनुकूल हो। परमात्मा से माँगने योग्य वस्तु सद्बुद्धि है। जिस पर परमात्मा प्रसन्न होते हैं, उसे सद्बुद्धि प्रदान करते हैं। सद्बुद्धि से सत् मार्ग पर प्रगति होती है और सत् कर्म से किसी प्रकार के सुख की कमी नहीं रहती । गायत्री सद्बुद्धि का मन्त्र है। इसलिए उसे मन्त्रों का मुकुटमणि कहा गया है।'

जगद्गुरु शङ्कराचार्यजी का कथन है-'गायत्री की महिमा का वर्णन करना मनुष्य की सामर्थ्य से बाहर है। बुद्धि का शुद्ध होना इतना बड़ा कार्य है। जिसकी समता संसार के और किसी काम से नहीं हो सकती। आत्म-प्राप्ति करने की दिव्य दृष्टि जिस वस्तु से प्राप्त होती है, उसकी प्रेरणा गायत्री द्वारा होती है। गायत्री आदि मन्त्र है, उसका अवतार दुरितों को नष्ट करने और ऋत के अभिवर्धन के लिए हुआ है।'

स्वामी रामतीर्थ ने कहा है-'राम को प्राप्त करना सबसे बड़ा काम है। गायत्री का अभिप्राय बुद्धि को काम-रुचि से हटाकर राम-रुचि में लगा देना है। जिसकी बुद्धि पवित्र होगी, वही राम को प्राप्त कर सकेगा। गायत्री पुकारती है कि बुद्धि में ऐसी पवित्रता होनी चाहिए कि वह राम को काम से बढ़कर समझे।'

महर्षि रमण का उपदेश है- 'योग विद्या के अन्तर्गत मन्त्र विद्या बड़ी प्रबल है, मन्त्रों की शक्ति से अद्भुत सफलतायें मिलती हैं। गायत्री ऐसा मन्त्र है जिससे आध्यात्मिक और भौतिक दोनों प्रकार के लाभ मिलते हैं।'

स्वामी शिवानन्द जी कहते हैं- 'ब्राह्ममुहूर्त में गायत्री का जप करने से चित्त शुद्ध होता है और हृदय में निर्मलता आती है शरीर नीरोग रहता है, स्वभाव

में नम्रता आती है, बुद्धि सूक्ष्म होने से दूरदर्शिता बढ़ती है और स्मरणशक्ति का विकास होता है। कठिन प्रसङ्गों में गायत्री द्वारा दैवी सहायता मिलती है। उसके द्वारा आत्म-दर्शन हो सकता है।'

काली कमली वाले बाबा विशुद्धानन्द जी कहते थे-'पहले गायत्री की ओर रुचि ही नहीं होती, यदि ईश्वर कृपा से हो भी जाय, तो वह कुमार्गगामी नहीं रहता। गायत्री जिसके हृदय में वास करती हैं, उसका मन ईश्वर की ओर जाता है। विषय विकारों की व्यर्थता उसे भली प्रकार अनुभव होने लगती है। कई महात्मा गायत्री जप करके परम सिद्ध हुए हैं। परमात्मा की शक्ति ही गायत्री है। जो गायत्री के निकट जाता है, वह शुद्ध होकर रहता है। आत्म-कल्याण के लिए मन की शुद्धि आवश्यक है। मन की शुद्धि के लिये गायत्री मन्त्र आवश्यक है। ईश्वर प्राप्ति के लिए गायत्री जप को प्रथम सीढ़ी समझना चाहिए।'

दक्षिण भारत के प्रसिद्ध आत्मज्ञानी टी०सुब्बाराव कहते हैं- 'सविता नारायण की दैवी प्रकृति को गायत्री कहते हैं। आदिशक्ति होने के कारण इसको गायत्री कहते हैं। गीता में इसका वर्णन ''आदित्य वर्ण'' कहकर किया गया है। गायत्री की उपासना करना योग का सबसे प्रथम अङ्ग है।'

श्री स्वामी करपात्री जी का कथन है- जो गायत्री के अधिकारी हैं, उन्हें नित्य नियमित रूप से जप करना चाहिए। द्विजों के लिए गायत्री का जप एक अत्यन्त आवश्यक धर्म -कृत्य है।

गीता धर्म के व्याख्याता श्री स्वामी विद्यानन्द कहते हैं- ''गायत्री बुद्धि को पवित्र करती है। बुद्धि की पवित्रता से बढ़कर जीवन में दूसरा लाभ नहीं है, इसलिए गायत्री एक बहुत बड़े लाभ की जननी है।''

सर राधाकृष्णन् कहते हैं-'यदि हम सार्व-भौमिक प्रार्थना गायत्री पर विचार करें, तो हमें मालूम होगा कि यह वास्तव में कितना ठोस लाभ देती है। गायत्री मन्त्र में फिर से जीवन का स्रोत उत्पन्न करने वाली आकुल प्रार्थना है।'

प्रसिद्ध आर्यसमाजी महात्मा सर्वदानन्द जी का कथन है-'गायत्री मन्त्र द्वारा प्रभु

का पूजन सदा से आर्यों की रीति रही है। ऋषि दयानन्द ने भी उसी शैली का अनुसरण करके सन्ध्या का विधान तथा वेदों के स्वाध्याय का प्रयत्न करना बताया है। ऐसा करने से अन्तःकरण की शुद्धि तथा बुद्धि निर्मल होकर मनुष्य का जीवन अपने तथा दूसरों के लिए हितकर हो जाता है। जितना भी इस शुभ कर्म में श्रद्धा-विश्वास हो, उतना ही अविद्या आदि क्लेशों का ह्रास होता है, जो जिज्ञासु गायत्री मन्त्र को प्रेम और नियमपूर्वक उच्चारण करते हैं, उनके लिए यह संसार-सागर से तरने की नाव और आत्म-प्राप्ति की सड़क है।'

आर्यसमाज के जन्मदाता श्री स्वामी दयानन्द गायत्री के श्रद्धालु उपासक थे। ग्वालियर के राजा साहब से स्वामी जी ने कहा था कि भागवत सप्ताह की अपेक्षा गायत्री पुरश्चरण अधिक श्रेष्ठ है। जयपुर के सच्चिदानन्द, हीरालाल रावल, घोड़लसिंह आदि को गायत्री जप की विधि सिखाई थी। मुलतान में उपदेश के समय स्वामी जी ने गायत्री मन्त्र का उच्चारण किया और कहा कि यह मन्त्र सबसे श्रेष्ठ है। चारों वेदों का मूल यही गुरुमन्त्र है। आदि काल से सभी ऋषि-मुनि इसी का जप किया करते थे। स्वामी जी ने कई स्थानों पर गायत्री अनुष्ठानों का आयोजन कराया था, जिसमें ४० तक की संख्या में विद्वान् ब्राह्मण बुलाये गये थे। यह जप १५ दिन तक चले थे।

थियोसोफिकल सोसाइटी के एक वरिष्ठ सदस्य प्रो०आर०श्रीनिवासन का कथन है कि 'हिन्दू धार्मिक विचारधारा में गायत्री को सबसे अधिक शक्तिशाली मन्त्र माना गया है। उसका अर्थ भी बड़ा दूरगामी और गूढ़ है। इस मन्त्र के अनेक अर्थ होते हैं और भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं। इसमें दृष्ट और अदृष्ट, उच्च और नीच, मानव और देव सबको किसी रहस्यमय तन्तु द्वारा एकत्रित कर लेने की शक्ति पाई जाती है। जब इस मन्त्र का अधिकारी व्यक्ति गायत्री के अर्थ और रहस्य, मन और हृदय को एकाग्र करके उसका शुद्ध उच्चारण करता है, तब उसका सम्बन्ध दृश्य सूर्य में अन्तर्निहित महान्

चैतन्य शक्ति से स्थापित हो जाता है। वह मनुष्य कहीं भी मन्त्रोच्चारण करता हो, पर उसके ऊपर तथा आसपास के वातावरण में विराट् आध्यात्मिक प्रभाव उत्पन्न हो जाता है। यही प्रभाव एक महान् आध्यात्मिक आशीर्वाद है। इन्हीं कारणों से हमारे पूर्वजों ने गायत्री मन्त्र की अनुपम शक्ति के लिए उनकी स्तुतियाँ की हैं।'

इस प्रकार वर्तमान शताब्दी के अनेकों गण्यमान्य बुद्धिवादी महापुरुषों के अभिमत हमारे पास संगृहीत हैं। उन पर विचार करने से इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि गायत्री उपासना कोई अन्ध-विश्वास, अन्ध-परम्परा नहीं है वरन् उसके पीछे आत्मोन्नति करने वाले ठोस तत्त्वों का बल है। इस महान् शक्ति को अपनाने का जिसने भी प्रयत्न किया है, उसे लाभ मिला है। गायत्री साधना कभी निष्फल नहीं जाती।

गायत्री साधना का उद्देश्य

नये विचारों से पुराने विचार बदल जाते हैं। कोई व्यक्ति किसी बात को गलत रूप से समझ रहा हो तो उसे तर्क, प्रमाण और उदाहरण के आधार पर नई बात समझाई जा सकती है, यदि वह अत्यन्त ही दुराग्राही, मूढ़, उत्तेजित या मदान्ध नहीं है, तो प्राय: सही बात को समझने में विशेष कठिनाई नहीं होती। सही बात समझ जाने पर प्राय:गलत मान्यता बदल जाती है। स्वार्थ या मान-रक्षा के कारण कोई अपनी पूर्व मान्यता की वकालत करता रहे यह बात दूसरी है, पर मान्यता और विश्वास क्षेत्र में उनका विचार परिवर्तन अवश्य हो जाता है। ज्ञान द्वारा अज्ञान को हटा दिया जाना कुछ विशेष कठिन नहीं है।

परन्तु स्वभाव, रुचि, इच्छा, भावना और प्रकृति के बारे में यह बात नहीं है और उन्हें साधारण रीति से नहीं बदला जा सकता। यह जिस स्थान पर जमी होती है, वहाँ से आसानी से नहीं हटती, चूँकि मनुष्य चौरासी लाख कीट-पतङ्गों, जीव-जन्तुओं की क्षुद्र योनियों में भ्रमण करता हुआ, नर-देह में आता है, इसलिए स्वभावत: उसके पिछले जन्म-जन्मान्तरों के पाशविक नीच संस्कार

बड़ी दृढ़ता से अपनी जड़ मनोभूमि में जमाये होते हैं। मस्तिष्क में नाना प्रकार के विचार आते और जाते हैं, उनमें परिवर्तन होना चाहता है, पर उसका विशेष प्रभाव इस मनोभूमि पर नहीं पड़ता। अच्छे उपदेश सुनने, अच्छी पुस्तक पढ़ने एवं गम्भीरतापूर्वक आत्म-चिन्तन करने से मनुष्य भलाई और बुराई के, धर्म-अधर्म के अन्तर को भली प्रकार समझ जाता है। उसकी अपनी भूलें, बुराइयाँ और कमजोरियाँ भली प्रकार प्रतीत हो जाती हैं। बौद्धिक स्तर पर वह सोचता है और चाहता है कि इन बुराइयों से उसे छुटकारा मिल जाय, कई बार तो वह अपनी काफी भर्त्सना भी करता है, इतने पर भी वह अपनी चिर संचित कुप्रवृत्तियों से, बुरी आदतों से अपने को अलग नहीं कर पाता।

नशेबाज, चोर, दुष्ट, दुराचारी प्रकृति के मनुष्य यह भली-भाँति जानते हैं कि हम गलत कार्य अपनाये हुए हैं, वे बहुधा सोचते रहते हैं कि-काश! इन बुराइयों से हमें छुटकारा मिल जाता, पर उसकी इच्छा एक निर्बल कल्पना मात्र रह जाती है, उनके मनोरथ निष्फल ही होते रहते हैं। बुराइयाँ छूटती नहीं। जब भी प्रलोभन का अवसर आता है, तब मनोभूमि में जड़ जमाये बैठी हुई कुप्रवृत्तियाँ आँधी-तूफान की तरह उमड़ पड़ती हैं और वह व्यक्ति आदत से मजबूर होकर उन्हीं बुरे कार्यों को फिर कर बैठता है। विचार और संस्कार इन दोनों की तुलना में संस्कार की शक्ति अत्यधिक प्रबल है, विचार एक नन्हा-सा शिशु है, तो संस्कार परिपुष्ट-प्रौढ़। दोनों के युद्ध में प्रायः ऐसा ही परिणाम देखा जाता है कि शिशु की हार होती है और प्रौढ़ की जीत। यद्यपि कई बार मनस्वी व्यक्ति, श्रीकृष्ण द्वारा पूतना और राम द्वारा ताड़का-बध का उदाहरण उपस्थित करके अपने विचार बल द्वारा कुसंस्कारों पर विजय प्राप्त करते हैं। पर आमतौर से लोग कुसंस्कारों के जाल में फँसे पक्षी की तरह उलझे हुए देखे जाते हैं। अनेक धर्मोपदेशक, ज्ञानी विद्वान्, नेता, सम्भ्रान्त महापुरुष समझे जाने वाले व्यक्तियों का निजी चरित्र जब कुकर्म युक्त देखा जाता है, तो यही कहना पड़ता है कि इतनी बुद्धि प्रौढ़ता भी अपने कुसंस्कारों पर उन्हें विजय न दिला सकी। कई बार तो अच्छे-अच्छे ईमानदार और तपस्वी मनुष्य किसी विशेष प्रलोभन के अवसर

पर डिग जाते हैं, जिनके लिए पीछे उन्हें पश्चात्ताप करना पड़ता है। चिरसंचित पाशविक वृत्तियों का भूकम्प जब आता है, तो सदाशयता के आधार पर चिर प्रयत्न से बनाये हुए सुचरित्र की दीवार हिल जाती है।

उपर्युक्त पंक्तियों का तात्पर्य यह नहीं है कि विचार-शक्ति निरर्थक वस्तु है और उसके द्वारा कुसंस्कारों को जीतने में सहायता नहीं मिलती। इन पंक्तियों में यह कहा जा रहा है कि साधारण मनोबल की सदिच्छाएँ मनोभूमि का परिमार्जन करने में बहुत अधिक समय में मन्द गति से धीरे-धीरे आगे बढ़ती है, अनेक बार उन्हें निराशा और असफलता का मुँह देखना पड़ता है। इस पर भी यदि सद्‌विचारों का कार्य जारी रहे, तो आवश्यक है। कालान्तर में कुसंस्कारों पर विजय प्राप्त की जा सकती है। अध्यात्म विद्या के आचार्य इतने आवश्यक कार्य को इतने विलम्ब तक पड़ा रहने देना नहीं चाहते। इसलिए उन्होंने इस सम्बन्ध में अत्यधिक गंभीरता, सूक्ष्म दृष्टि और मनोयोग पूर्वक विचार करके मानव अन्तःकरण में रहने वाले पाशविक संस्कारों का पारदर्शी विश्लेषण किया है और वे इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि मनःक्षेत्र के जिस स्तर पर विचारों के कम्पन क्रियाशील रहते हैं, उससे कहीं अधिक गहरे स्तर पर संस्कारों की जड़ें होती हैं।

जैसे कुँआ खोदने पर भी जमीन में विभिन्न जाति की मिट्टियों के पर्त निकलते हैं, वैसे ही मनोभूमि के कितने ही पर्त उनके कार्य, गुण और क्षेत्र भिन्न-भिन्न हैं। ऊपर दो पर्त (१) मन, (२) बुद्धि हैं। मन में इच्छाएँ, वासनाएँ, कामनाएँ पैदा होती हैं, बुद्धि का काम विचार करना, मार्ग ढूँढ़ना और निर्णय करना है। ये दोनों पर्त मनुष्य के निकट सम्पर्क में हैं, इन्हें स्थूल मनःक्षेत्र कहते हैं। समझने से तथा परिस्थितियों में परिवर्तन से इसमें आसानी से हेर-फेर हो जाता है।

इस स्थूल क्षेत्र से गहरे पर्त को सूक्ष्म मनःक्षेत्र कहते हैं। इसके प्रमुख भाग दो हैं- (१) चित्त, (२) अहंकार। चित्त में संस्कार, आदत, रुचि, स्वभाव, गुण की जड़ें रहती हैं। अहंकार अपने सम्बन्ध में मान्यता को कहते हैं। अपने को जो व्यक्ति धनी-दरिद्र, ब्राह्मण, शूद्र, पापी-पुण्यात्मा, अभागा, सौभाग्यशाली,

स्त्री-पुरुष, मूर्ख-बुद्धिमान्, जीव-ब्रह्म, बद्ध-मुक्त आदि जैसा भी कुछ मान लेता है, वह वैसे ही अहङ्कार वाला बन जाता है। आत्मा के अहं के सम्बन्ध में मान्यता का नाम ही अहङ्कार है। इन मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार के अनेक भेद-उपभेद हैं और उनके गुण, कर्म अलग-अलग हैं, उनका वर्णन इन पंक्तियों में नहीं किया जा सकता। यहाँ तो उनका संक्षिप्त परिचय देना इसलिए आवश्यक हुआ है कि कुसंस्कारों के निवारण के बारे में कुछ बातें भली प्रकार जानने में पाठकों को सुविधा हो।

जैसे मन और बुद्धि का जोड़ा है, वैसे ही चित्त और अहङ्कार का जोड़ा है। मन में नाना प्रकार की इच्छाएँ, कामनाएँ रहती हैं, पर बुद्धि उनका निर्णय करती है कि कौन सी इच्छा प्रकट करने योग्य है, कौन सी दबा देने योग्य है ? इसे बुद्धि जानती है और वह सभ्यता, लोकाचार, सामाजिक नियम, धर्म, कर्त्तव्य, संभव-असंभव आदि का ध्यान रखते हुए अनुपयुक्त इच्छाओं को भीतर दबाती रहती है। जो इच्छा कार्य रूप में लाने योग्य जँचती है, उन्हीं के लिए बुद्धि अपना प्रयत्न करती है। इस प्रकार ये दोनों मिलकर मस्तिष्क क्षेत्र में अपना ताना-बाना बुनते रहते हैं।

अन्तःकरण क्षेत्र में चित्त और अहङ्कार का जोड़ा कार्य करता है। जीवात्मा अपने को जिस श्रेणी का, स्तर का अनुभव करता है, चित्त में उस श्रेणी के, उसी स्तर के, पूर्व संस्कार सक्रिय और परिपुष्ट रहते हैं। कोई व्यक्ति अपने को शराबी, पापों वाला, कसाई, अछूत, समाज के निम्न वर्ग का मानता है, तो उसका तो यह अहङ्कार उसके चित्त को उसी जाति के संस्कारों की जड़ मानने और चिरस्थायी रखने के लिए प्रस्तुत रखेगा। जो गुण, कर्म, स्वभाव इस श्रेणी के लोगों में होते हैं, वे सभी उनके चित्त में संस्कार रूप से जड़ जमाकर बैठ जायेंगे। यदि उनका अहङ्कार अपराधी या शराबी की मान्यता का परित्याग करके लोकसेवी, महात्मा, सच्चरित्र एवं उच्च होने की अपनी मान्यता स्थिर कर ले तो अति शीघ्र उसकी पुरानी आदतें, आकांक्षाएँ, अभिलाषाएँ बदल जायेंगी और वह वैसा ही बन जाएगा, जैसा कि अपने सम्बन्ध में उसका विश्वास है। शराब पीना बुरी बात है इतना मात्र समझने से उसकी लत छूटना मुश्किल है, क्योंकि हर कोई जानता है

कि क्या बुराई है, क्या भलाई ? ऐसे विचार तो उसके मन में पहले भी अनेक बार आ चुके होते हैं। लत तभी छूट सकती है, जब वह अपने अहंकार को प्रतिष्ठित नागरिक की मान्यता में बदले और अनुभव करे कि ये आदतें मेरे गौरव के, स्तर के, व्यवहार के अनुपयुक्त हैं। अन्त:करण की एक पुकार से, एक ही हुङ्कार से, एक ही चीत्कार से चित्त में जमे हुए कुसंस्कार उखड़ कर एक ओर गिर पड़ते हैं और उनके स्थान पर नये, उपयुक्त आवश्यकता के अनुरूप संस्कार कुछ ही समय में जम जाते हैं, तो जो कार्य मन और बुद्धि द्वारा अत्यन्त कष्ट साध्य मालूम पड़ता था, वह अहंकार परिवर्तन की एक चुटकी में ठीक हो जाता है।

अहङ्कार तक सीधी पहुँच साधना के अतिरिक्त और किसी मार्ग से नहीं हो सकती। मन और बुद्धि को शान्त, मूर्च्छित, तन्द्रित अवस्था में छोड़ कर सीधे अहङ्कार तक प्रवेश पाना ही साधना का उद्देश्य है। गायत्री साधना का विधान भी इस प्रकार का है उसका सीधा प्रभाव अहङ्कार पर पड़ता है। मैं ब्राह्मी शक्ति का आधार हूँ, ईश्वरीय स्फुरणा-गायत्री मेरे रोम-रोम में ओत-प्रोत हो रही है, मैं उसे अधिकाधिक मात्रा में अपने अन्दर धारण करके ब्राह्मी भूत हो रहा हूँ।' ये मान्यताएँ मानवीय अहङ्कार को पाशविक स्तर से बहुत ऊँचा उठा ले जाती है और उसे देवभाव में अवस्थित करती है। मान्यता कोई साधारण वस्तु नहीं है। गीता कहती है-'**यो यच्छ्रद्धः स एव सः**' जो अपने सम्बन्ध में जैसी श्रद्धा, मान्यता रखता है, वस्तुत: वैसा ही होता है। गायत्री साधना अपने साधक में दैवी आत्म-विश्वास, ईश्वरीय अहङ्कार प्रदान करती हैं और वह कुछ ही समय में वस्तुत: वैसा ही हो जाता है। जिस स्तर पर उसकी आत्म-मान्यता है, उसी स्तर पर चित्त-प्रवृत्तियाँ रहेंगी वैसी आदतें, इच्छायें, रुचियाँ, प्रवृत्तियाँ, क्रियाएँ उसमें दीख पड़ेंगी। जो दिव्य मान्यता से ओत-प्रोत हैं, निश्चय ही उसकी इच्छाएँ, आदतें और क्रियाएँ वैसी ही होंगी। यह साधना प्रक्रिया मानव अन्त:करण का कायाकल्प कर देती है, जिस आत्म सुधार के लिए उपदेश सुनना और पुस्तक पढ़ना विशेष सफल नहीं होता था, वह कार्य साधना द्वारा सुविधा पूर्वक पूरा हो जाता है। यही साधना का रहस्य है।

उच्च मन:क्षेत्र (सुपर मेन्टल) ही ईश्वरीय दिव्य-शक्तियों के अवतरण का उपयुक्त स्थान है। हवाई जहाज वहीं उतरता है, जहाँ उसका अड्डा है। ईश्वरीय

दिव्यशक्ति मानव प्राणी के उसी उच्च मन:क्षेत्र में उतरती है। यदि वह साधना द्वारा निर्मल नहीं बना लिया गया है, तो अति सूक्ष्म दिव्यशक्तियों को अपने में नहीं उतारा जा सकता। साधना, साधक के उच्च मन:क्षेत्र को उपयुक्त हवाई अड्डा बनाती है जहाँ वह दैवी शक्ति उतर सके।

आत्म-कल्याण और आत्मोत्थान के लिए अनेक प्रकार की साधनाओं का आश्रय लिया जाता है। देश, काल और पात्र भेद के कारण भी साधना मार्ग का निर्णय करने में बहुत कुछ विचार और परिवर्तन करना पड़ता है। 'स्वाध्याय' में चित्त लगाने से सन्मार्ग की ओर रुचि होती है। सत्सङ्ग से स्वभाव और संस्कार शुद्ध बनते हैं। कीर्तन से एकाग्रता और तन्मयता की वृद्धि होती है। 'दान-पुण्य' से त्याग और अपरिग्रह की भावना पुष्ट होती है। 'पूजा-उपासना' से आस्तिकता और ईश्वर विश्वास की भावना उत्पन्न होती है। इस प्रकार भिन्न-भिन्न उद्देश्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगोचर रखकर ऋषियों ने अनेक प्रकार की साधनाओं का उपदेश किया है। पर इन में सर्वोपरि तप की साधना ही है। तप की अग्नि से आत्मा में मल, विक्षेप और पाप-ताप बहुत शीघ्र भस्म हो जाते हैं और आत्मा में एक अपूर्व शक्ति का आविर्भाव होता है। गायत्री-उपासना सर्वश्रेष्ठ तपश्चर्या है। इसके फलस्वरूप साधक को जो दैवी शक्ति प्राप्त होती है, उससे सच्चा आत्मिक आनन्द प्राप्त करके उच्च से उच्च भौतिक और आध्यात्मिक लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

यह अपरा प्रकृति को परा प्रकृति में रूपान्तर करने का विज्ञान है। मनुष्य की पाशविक वृत्तियों के आधार पर ईश्वरीय सत् शक्ति को प्रतिष्ठित करना ही अध्यात्म विज्ञान का कार्य है। तुच्छ को महान्, सीमित को असीम, अणु को विभु, बद्ध को मुक्त, पशु को देव बनाना साधना का उद्देश्य है। यह परिवर्तन होने के साथ-साथ वे सामर्थ्य भी मनुष्य में आ जाती हैं, जो उस सत्-शक्ति में सन्निहित हैं और जिन्हें ऋद्धि-सिद्धि आदि नामों से पुकारते हैं। साधना आध्यात्मिक काया कल्प की एक वैज्ञानिक प्रणाली है और निश्चय ही अन्य साधना विधियों में गायत्री साधना का स्थान सर्वश्रेष्ठ है।

आत्म कल्याण की सर्वोपरि उपासना

गायत्री उपासना सर्वश्रेष्ठ, सर्वोपरि और अनादि उपासना है, उसका प्रभाव और परिणाम असंदिग्ध एवं अतुलित है। अन्य उपासना-पद्धतियाँ अपने लक्ष्य को प्राप्त करा सकने में असमर्थ हो सकती हैं, पर गायत्री-उपासना में ऐसी अड़चन नहीं आती।

उपासना संसार में सबसे अधिक लाभदायक प्रक्रिया है। सांसारिक-सुख-सुविधाओं के उपार्जन की दृष्टि से स्वास्थ्य, शिक्षा, कुशलता, सम्पत्ति, मित्रता आदि की उपयोगितायें लोगों ने समझ ली हैं और उनके उपार्जन का प्रयत्न भी करते हैं पर ऐसे कम ही लोग हैं, जिन्होंने आत्मबल द्वारा प्राप्त हो सकने वाली विभूतियों का मूल्यांकन किया हो और उनका उपार्जन करने के लिए उपासना क्रिया-पद्धति को व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध रूप में अपनाया हो।

भारतीय धर्मशास्त्रों का मर्म, ऋषियों का अनुभव और महापुरुषों के कार्यक्रम को उपासना-अन्वेषण की दृष्टि से देखा जाता है, तो उनमें गायत्री उपासना ही सर्वोत्तम ठहरती है। सन्ध्या-हवन की कोई भी प्रणाली क्यों न हो, गायत्री उपासना का उसमें अनिवार्य स्थान है, वेद भारतीय धर्म के मूल आधार हैं और उनका बीज मन्त्र एक मात्र गायत्री है। गायत्री के चार चरणों की व्याख्यास्वरूप चार वेद बने हैं। गुरु मन्त्र के रूप में प्रत्येक भारतीय धर्मानुयायी का एक ही अवलम्बन है। गायत्री मन्त्र इस सुनिश्चित तथ्य को ध्यान में रखते हुए कोई वेद-धर्म अनुयायी और कोई मार्ग अपना भी नहीं सकता। खोज-बीन और अनुभूतियों के आधार पर हमने जो एकमात्र राजमार्ग पाया, उस पर क्रमबद्ध रूप से चलते रहे। यही कारण है कि उस मार्ग पर चलते हुए इतना कुछ पाया है, जिनके आधार पर सन्तोष, आनन्द एवं उल्लास का अनुभव किया।

उपासना मानव-जीवन का सर्वोत्कृष्ट व्यवसाय है। अन्य व्यवसायों में जितना मनोयोग, जितना श्रम, जितना समय और जितना साधन लगाया जाता है, उतना ही यदि उपासना में लगाया जाता तो अपेक्षाकृत असंख्य गुना लाभ उठाया जा सकता है।

अध्यात्म भी भौतिक विज्ञान की तरह एक सर्वाङ्गपूर्ण विज्ञान है और उसका लाभ तभी उठाया जा सकता है, जब व्यवस्थित जानकारी तथा क्रिया प्रणाली अपनाई जाए।

संसार में अन्य समस्त क्रिया-कलापों की तरह उपासना भी (१) सिद्धान्त और (२) व्यवहार -इन दो भागों में विभक्त है। ये दोनों ही पहलू एक दूसरे से सम्बद्ध हैं। एक के बिना दूसरा पहलू अधूरा है। डॉक्टर आपरेशन करने की कला सीखता है- फोड़ा कहाँ से, कैसे, किस औजार से कितना चीरा जाना चाहिये और उसके बाद उस पर क्या लगाना चाहिये ? यह समझता है। पर इतने मात्र से ही वह अपने व्यवसाय में कुशल नहीं हो जाता। उसे फोड़ा उत्पन्न होने का कारण, उसकी किस्में तथा पकने, फूटने की सैद्धान्तिक जानकारी भी होनी चाहिए। जो सिद्धान्तों से अपरिचित हैं, केवल व्यवहार जानते हैं, वह अनाड़ी डाक्टर अपने व्यवसाय में सफल नहीं हो सकते। व्यापारी, किसान, शिल्पी आदि सभी वर्गों के लोग हाथ पैर से क्या करना होगा ? यह जानते हैं, पर उतने से ही उनका काम नहीं चल जाता। व्यापारी को व्यावसायिक सिद्धान्त, किसान को पौधों की क्रिया प्रणाली, शिल्पी को अपने विषय की आवश्यक जानकारी प्राप्त करनी होती है। यदि वह ऐसा न करे, तो वह मशीन मात्र बनकर रह जायेगा।

एक इन्जीनियर और एक साधारण कुली में इस जानकारी का ही अन्तर होता है। कुली भी बताने पर हाथ पैर से वही कार्य कर सकता है, जो इन्जीनियर के हाथ पैर करते हैं। कई बार तो कुली अपेक्षाकृत अधिक मेहनत भी कर सकता है, पर इन्जीनियर जितना ज्ञान न होने के कारण उसे वह श्रेय नहीं मिलता जो इन्जीनियर को। अनपढ़ किसान की अपेक्षा एक कृषि स्नातक खेती में अधिक लाभ ले सकता है। सैद्धान्तिक शिक्षा के अभाव में व्यवहार मात्र से जो लाभ मिलेगा, वह नगण्य ही होगा। उपासना क्षेत्र में भी ऐसा ही विधान है। उपासक को पूजा-पाठ के नियम जानकर ही सन्तुष्ट नहीं हो जाना चाहिए वरन् उसके सिद्धान्त, आदर्श, तथ्य एवं स्वरूप को भी समझना चाहिए। जो आवश्यकता को

अनुभव करते हैं और उसे पूरा करने में संलग्न रहते हैं, उनकी साधना असंदिग्ध रूप से सफल होती है। किन्तु जो केवल कर्मकाण्ड सीखकर ही सन्तुष्ट हो बैठते हैं, उनके हाथ यदि कुछ पड़े भी तो वह बहुत ही स्वल्प होता है।

वेद ज्ञान और विज्ञान के भाण्डागार हैं। संसार का समस्त प्रकट और अप्रकट ज्ञान वेदों में भरा पड़ा है। इन वेदों का बीज गायत्री महामन्त्र है। जिस प्रकार विशाल वट वृक्ष एक छोटे से बीज की ही प्रतिकृति होता है, उसी प्रकार वेदों में सन्निहित सारी शिक्षाएँ तथा सारी विद्याएँ बीज रूप से गायत्री महामन्त्र में विद्यमान हैं।

इन २४ अक्षरों में सूत्र रूप से समाविष्ट प्रेरणाओं और शिक्षाओं पर गंभीरता पूर्वक विचार और मनन-चिन्तन किया जाये, तो लगता है कि विश्व के समस्त धर्म ग्रन्थों एवं नीति-शास्त्रों का निचोड़ इन थोड़े से अक्षरों में, गागर में सागर की तरह भर दिया गया है। व्यक्ति एवं समाज की सर्वतोमुखी-सर्वकालीन-समस्त समस्याओं का हल, समस्त उलझनों का समाधान इस महामन्त्र की मूल शिक्षाओं से मिल सकता है। ये चौबीस अक्षर इतने सारगर्भित हैं कि ऋषियों को उनकी विवेचना, व्याख्या करने के लिए चार वेदों का आवरण प्रस्तुत करना पड़ा।

प्राचीन काल में ऋषियों ने गायत्री के तत्त्व-ज्ञान की गंभीतारपूर्वक शोध की थी और इस गहन समुद्र में गहराई तक प्रवेश करके ज्ञान-विज्ञान की अतुलित रत्न राशि का लाभ लिया था। विश्वामित्र तो उसी के विशेष ऋषि कहलाये। उन्होंने स्वयं और अपने सहचरों सहित इस महाविद्या के रहस्यों को जानने के लिए समस्त जीवन खपाया और उनने जो पाया, उसका लाभ समस्त आध्यात्मिक जगत् ने उठाया।

वेदों में ज्ञान भी है और विज्ञान भी। गायत्री के अक्षरों में से प्रस्फुटित होने वाली शिक्षा मनुष्य समाज की भौतिक एवं आध्यात्मिक जिज्ञासाओं का समाधान करती है, सुख-शान्तिमय जीवन बिताने का प्रभावपूर्ण मार्गदर्शन करती

है। यदि कोई उस प्रकाश का अवलम्बन लेकर अपने कदम उठाता चले, तो आनन्द और उल्लास भरा वैसा हो स्वर्गीय जीवन जी सकता है, जैसा कि जीने के लिये वह मानव प्राणी इस वसुधा पर अवतीर्ण हुआ है।

गायत्री में सन्निहित विज्ञान तो इतना महान् है कि वर्तमान भौतिक विज्ञान के समस्त चमत्कार उनकी तुलना में तुच्छ ठहराये जा सकते हैं। बेशक, पिछली दो सदियों में विज्ञान ने बहुत उन्नति की है। एक से एक बढ़ कर सिद्धान्तों, यन्त्रों और सुख-साधनों का आविष्कार करके एक चमत्कार उत्पन्न किया है। भविष्य में उसकी और भी अधिक उन्नति संभावित है, पर साथ ही यह भी निश्चित है कि अध्यात्म विज्ञान की महत्ता एवं उपयोगिता भौतिक विज्ञान की तुलना में असंख्य गुनी अधिक है।

भारत पूर्वकाल में विज्ञान के उच्च शिखर पर जा पहुँचा था। उसके गौरव को विश्व में सर्वोपरि बनाने में इस विज्ञान का ही श्रेय था। दिव्य अस्त्र-शस्त्र, शरीरों में अकूत बल, धन-समृद्धि का इतना बाहुल्य था कि स्वर्ण कलश हर घर पर रखे रहते थे, अकूत आत्म बल और आन्तरिक शक्तियों के बल पर अभीष्ट परिस्थितियाँ तथा साधन सामग्री उत्पन्न कर सकने की क्षमता हमारे पूर्वजों की विशेषताएँ थीं। जहाँ वेद, ब्रह्म विद्या एवं आध्यात्मिक तत्त्व ज्ञान के स्तर पर, भावात्मक स्तर पर देवताओं जैसे पवित्र बनाकर इस धरती पर स्वर्ग अवतरण कराने में सफल हुए थे, वहीं उन्होंने विज्ञान के आधार पर प्रत्येक प्रकार की स्मृतियाँ भी अर्जित की थीं। यही कारण है कि इस धरती के समस्त निवासियों ने उन्हें भूसुर, धरती के देवता कहकर सम्मानित किया था। जगद्गुरु एवं चक्रवर्ती शासन के महान् उत्तरदायित्वों को सौंपा था और जीवन की प्रत्येक दिशा में उनका नेतृत्व स्वीकार किया था। यह उनके विज्ञान की महिमा थी।

वह विज्ञान आज जैसा न था जो मँहगी तथा आये दिन टूटती फूटती रहने वाली तथा निकम्मी हो जाने वाली मशीनों के आधार पर चलता हो। तेल, कोयला, पेट्रोल, बिजली आदि ईंधन इस दुनिया में बहुत कम हैं। जिस गति से वैज्ञानिक प्रयोजनों में, कलकारखानों तथा विभिन्न मशीनों में खर्च हो रहा है, उसे

देखते हुए यह सब सामग्री सौ-डेढ़ सौ वर्षों में समाप्त हो सकती है और तब आज का यह यन्त्रवादी विज्ञान बेमौत मर सकता है। भारतीय तत्त्वदर्शी वैज्ञानिकों ने, ऋषियों ने जिस विज्ञान का आविष्कार किया था, वह यन्त्रों पर नहीं, तन्त्रों पर आधारित था। मानव शरीर हाड़मांस का पुतला ही नहीं वरन् उसमें एक से एक बढ़कर चमत्कारी शक्ति केन्द्र प्रसुप्त अवस्था में पड़े हैं। षट्चक्र, २४ उपचक्र, ५१ उपत्यिकायें, १०८ ग्रन्थियों और महारन्ध्र की सहस्र काकेशिक स्फुरणायें उतनी शक्ति तत्त्वों से ओत-प्रोत हैं कि यदि उनमें से थोड़ी सी भी जाग्रत् की जा सकें तो इतनी बड़ी उपलब्धियाँ हाथ में आ सकती हैं जिनकी तुलना में वर्तमान विज्ञान की भौतिक उपलब्धियाँ नगण्य एवं तुच्छ ही सिद्ध होंगी। प्राचीनकाल में ऋषि, महर्षि अपने शरीरों की प्रयोगशाला में ऐसे ही परीक्षण किया करते थे। योगाभ्यास के द्वारा जो ऋद्धियाँ और सिद्धियाँ उपलब्ध करते थे, उनके चमत्कारों का आधार कोई जादू नहीं वरन् यह आत्म-विज्ञान ही होता था। वेदों में इस प्रकार के आत्म विज्ञान का विस्तार पूर्वक वर्णन हुआ है।

वेदों में वर्णित विज्ञान की क्षमता का पता लगाने के लिए जर्मन सरकार ने कुछ समय पूर्व महत्त्वपूर्ण प्रयत्न किया था। जर्मन प्रोफेसर मैक्समूलर भारत आये और यहाँ वेद विद्वानों की सहायता से उन्होंने ऋग्वेद का जर्मन भाषा में अनुवाद किया था। इस शोध कार्य के लिए जर्मन सरकार ने लाखों रुपया खर्च किया था। इसके बाद ही जर्मनी ने इतनी बड़ी वैज्ञानिक उन्नति की। वह थोड़े ही समय में समस्त विश्व में चक्रवर्ती शासन स्थापित करने के स्वप्ने देखने लगा। पिछले दो महायुद्ध उसी ने आरंभ किये। अपनी शक्ति का ठीक अन्दाज न लगा सकने के कारण वह परास्त तो अवश्य हुआ, पर अपनी उपलब्धियों के कारण वह संसार भर के लिए आज भी एक आश्चर्य एवं रहस्य बना हुआ है। अणु-विज्ञान का आविष्कार सबसे प्रथम उसी ने किया और देशों ने तो पीछे उसी के आविष्कार का लाभ उठाया।

वेदों की ऋचाओं में सूत्र रूप से समाविष्ट आत्म-विज्ञान की महत्ता का क्षेत्र इतना बड़ा है कि उसकी जितनी भी शोध एवं साधना की जा सके उतनी ही

कम है। प्राचीनकाल में इस दिशा में बहुत बड़ी प्रगति हुई थी, पर यह न समझना चाहिए कि उसमें आगे बढ़ने की गुन्जायश न थी। आगे और भी बहुत कुछ हो सकता था और मनुष्य देवताओं की तरह अजर-अमर बनकर इस धरती को स्वर्ग बना सकता था, यदि उसके हाथ में वेदों का सन्निहित समस्त विज्ञान आ जाता, पर संसार चक्र परिवर्तनशील है। हम उत्थान से विमुख होकर पतन के गर्त में गिरे और उन पूर्व उपलब्धियों को गँवा बैठे। यदि उस विज्ञान से हम वञ्चित न हो गये होते, तो इस दयनीय दुर्दशा में असहायों की तरह पड़े सन्त्रस्त न हो रहे होते।

ऊपर की पंक्तियों में जिस आत्म-विज्ञान की चर्चा की जा रही है, वह वेद के दो अङ्गों में से, ज्ञान-विज्ञान में से, एक प्रमुख तत्त्व है। यह प्रथम ही कहा जा चुका है कि गायत्री वेदों का बीज मन्त्र है। किसी पेड़ में जो विशेषताएँ और संभावनाएँ होती हैं, वे छोटे से बीज में सूक्ष्म रूप से विद्यमान रहती हैं। मनुष्य का इतनी विशेषताओं वाला शरीर एवं मन अत्यन्त सूक्ष्म रूप से वीर्य कण के एक छोटे से एक बीज पिण्ड में मौजूद रहता है। ठीक इसी प्रकार वेदों में वर्णित विविध वैज्ञानिक उपलब्धियाँ गायत्री महामन्त्र के थोड़े से बीज रूप में भी भरी पड़ी हैं। इस महाशक्ति की जो ठीक तरह साधना कर सकता है, वह अनुपम स्तर का शक्तिवान् बन सकता है।

व्यायाम से शरीर पुष्ट होता है, अध्ययन से विद्या आती है, श्रम करने से धन कमाया जाता है, सत्कर्मों से यश मिलता है, सद्गुणों से मित्र बनते हैं। इसी प्रकार उपासना द्वारा अन्तरङ्ग जीवन में प्रसुप्त पड़ी हुई अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ सजग हो उठती हैं और उस जागृति का प्रकाश मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में एक विशिष्टता का रूप धारण करके प्रकट करता हुआ प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होता है। गायत्री-उपासक में तेजस्विता की अभिवृद्धि स्वाभाविक है। तेजस्वी एवं मनस्वी व्यक्ति स्वभावतः हर दिशा में सहज सफलता प्राप्त करता चलता है।

मानवी मस्तिष्क में जो शक्ति केन्द्र भरे पड़े हैं, उनका पूरी तरह उपयोग कर सकना तो दूर, अभी मनुष्य को उनका परिचय भी पूरी तरह नहीं मिला है।

मनोवैज्ञानिकों को अन्तर्मन की जितनी जानकारी अभी तक विशाल अनुसन्धानों के बाद मिल सकी है, उसे वे दो प्रतिशत के लगभग ही मानते हैं। प्रसुप्त मन की ९८ प्रतिशत जानकारी प्राप्त करना अभी तक शेष है। इसी प्रकार शरीर शास्त्री डॉक्टारों ने बाहरी मस्तिष्क का केवल ८ प्रतिशत ज्ञान प्राप्त किया है शेष के बारे में वे भी अभी अनजान हैं। मस्तिष्क सचमुच एक जादू का पिटारा है। इसमें सोचने समझने की क्षमता तो है ही, साथ ही उसमें ऐसे चुम्बकीय तत्त्व भी है जो अनन्त आकाश में भ्रमण करने वाली अद्‌भुत सिद्धियों, विभूतियों एवं सफलताओं को अपनी ओर खींचकर आकर्षित कर सकते हैं। सूक्ष्म जगत् में अपने अनुकूल वातावरण बना सकते हैं; जिन व्यक्तियों के साथ अपनी कामना, आकांक्षा का सम्बन्ध हैं, उन पर ऐसा प्रभाव डाला जा सकता है कि उसे हमारे अनुकूल ही गतिविधि अपनानी पड़े। गायत्री उपासना के द्वारा उपासक में ऐसे ही मानसिक चुम्बकीय तत्त्व सक्रिय हो उठते हैं। मनोबल बढ़ने से ऐसी विद्युत्‌धारा अन्तर्मन के प्रसुप्त क्षेत्रों में गतिशील हो जाती है कि अब तक अपने प्रयोजन में आया हुआ मस्तिष्कीय चुम्बक सक्रिय हो उठता है और वे उपलब्धियाँ सामने लाकर खड़ी कर देता है, जिन्हें आमतौर से सिद्धियों, विभूतियों का 'वरदान' एवं दैवी सहायता कहा जा सके।

उपासना में बरती गई तपश्चर्या से द्रवित होकर गायत्री माता ने अमुक सिद्धि या सफलता प्रदान की, यह भावुक भक्त का दृष्टिकोण है। इस तथ्य का वैज्ञानिक दृष्टिकोण यह है कि कठोर नियम, प्रतिबन्धों का पालन करने में जो प्रतिरोधात्मक क्षमता बढ़ी, उसने मनोबल का विकास किया। उसमें अन्तर्मन के प्रसुप्त शक्ति केन्द्रों का चुम्बकत्व जगाया और उसी जागरण ने अभीष्ट सफलतायें खींचकर सामने ला खड़ी कर दीं। मनुष्य अपने आप में एक देवता है। उसके भीतर वे समस्त दैवी शक्तियाँ बीज रूप में विद्यमान रहती हैं, जो इस विश्व में अन्यत्र कहीं भी हो सकती हैं। अन्यत्र रहने वाले देवता अपनी निर्धारित जिम्मेदारियाँ पूरी करने में लगे रहते हैं। वे हमारे व्यक्तिगत कामों में इतनी अधिक दिलचस्पी नहीं ले सकते कि अगणित उपासकों या भक्तों की अगणित प्रकार की समस्याओं के सुलझाने में संलग्न हो सकें। हमारी समस्याओं को हल करने की क्षमता हमारे

अपने भीतर रहने वाले देवताओं में होती है और उसी को किसी अनुष्ठान द्वारा सशक्त एवं गतिशील बनाकर के साधक को अपना प्रयोजन वस्तुतः आप ही पूरा करना पड़ता है। गायत्री अनुष्ठान के लिए विधि-विधान द्वारा, बढ़ने वाले मनोबल द्वारा यदि वह सक्रिय हो उठे तो अभीष्ट सफलतायें प्राप्त कर सकने की परिस्थितियाँ निर्मित या उपलब्ध कर सकना उसके लिए अधिक कठिन नहीं रहता।

गायत्री-उपासना मनुष्य जीवन को बहिरंग एवं अन्तरङ्ग दोनों ही दृष्टियों से समृद्ध और समुन्नत बनाने का राजमार्ग है। बाह्य उपचार से बाह्य जीवन की प्रगति होती है, पर अन्तरङ्ग विकास के बिना उसमें पूर्णता नहीं आ पाती। बाहरी जीवन की विशेषतायें छोटा सा शोक, सन्ताप, रोग, कष्ट, अवरोध एवं दुर्दिन सामने आते ही अस्त-व्यस्त हो जाती हैं, पर जिस व्यक्ति के पास आन्तरिक दृढ़ता, समृद्धि एवं क्षमता है वह बाहर के जीवन में बड़े से बड़ा अवरोध आने पर भी सुस्थिर बना रहता है और भयानक भँवरों को चीरता हुआ अपनी नाव को पार ले जाता है। भौतिक समृद्धि और आत्मिक शान्ति के लिए उपासना की वैज्ञानिक प्रक्रिया अचूक साधना है और कहना न होगा कि उपासनाओं में सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वोपरि एक मात्र गायत्री महामन्त्र की उपासना ही है।

❀❀❀

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)

: युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य- संक्षिप्त परिचय :

ज्यादा जानकारी यहाँ से प्राप्त करें : http://hindi.awgp.org/about_us

- **विचारक्रान्ति अभियान के प्रणेता** : विचारों को परिस्कृत और ऊँचा उथाने मे समर्थ 3000 से भी अधिक पुस्तकों के लेखन के माध्यम से विश्वव्यापी विचार क्रान्ति अभियान की शरुआत की ।
- **वेद, पुराण, उपनिषद के प्रसिद्ध भाष्यकार** : जिन्हों ने चारों वेद, 108 उपनिषद, षड दर्शन, 20 स्मृतियाँ एवं 18 पुराणों का युगानुकूल भाष्य किया, साथ ही 19 वाँ प्रज्ञा पुराण की रचना भी की ।
- **3000 से अधिक पुस्तकों के लेखक** : मनुष्य को देवता समान, घर-परिवार को स्वर्ग, समाज को सभ्य और समग्र विश्वराष्ट्र को श्रेष्ठ बनाने मे समर्थ हजारों पुस्तकें लिखकर समयानुकूल समर्थ मार्गदर्शन प्रदान किया ।
- **युग-निर्माण योजना के सूत्रधार** : जिन्होंने शतसूत्री युग निर्माण योजना बनाकर नये युग की आधार शिला रखी ।
- **वैज्ञानिक-अध्यात्मवाद के प्रणेता** : जिन्हों ने धर्म और विज्ञान के समन्वय की प्रथम प्रयोगशाला 'ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान' स्थापित कर सिद्ध किया कि "धर्म और विज्ञान विरोधी नहीं, पुरक है "।
- **'२१ वीं सदी : उज्वल भविष्य' के उद्घोषक** : जिन्हों ने '२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' का नारा दिया तथा युग विभीषिकाओं से भयग्रस्त मनुष्यता को नये युग के आगमन का संदेश दिया ।
- **स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सैनानी** : जिन्हों ने महात्मा गाँधी, मदन मोहन मालवीय, गुरुवर रविन्द्रनाथ टैगोर के साथ राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया एवं स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी "श्रीराम मत्त" के रुप में प्रख्यात हुए ।
- **गायत्री के सिद्ध साधक** : जिन्हों ने गायत्री और यज्ञ को रुढियों और पाखण्ड से मुक्त कर जन-जन की उपासना का आधार तथा सद्‌बुद्धि एवं सतकर्म जागरण का माध्यम बनाया ।
- **तपस्वी** : जिन्होंने गायत्री की कठोरतम साधना कर २४-२४ लाख के २४ महापुरश्चरण २४ वर्षो में सम्पन्न किया । प्रकृति प्रकोप को शांत कर अनिष्टों को टाला, सृजन सम्भावनाओं को साकार किया ।
- **अखिल विश्व गायत्री परिवार के जनक** : जिन्हों ने अपने जीवनकाल में ही अपने साथ करोडों लोगों को आत्मियता के सूत्र में बाँधकर विश्व व्यापी 'युग निर्माण परिवार' - 'गायत्री परिवार' का गठन किया ।
- **समाज सुधारक** : जिन्हों ने नारी जागरण, व्यसन मुक्ति, आदर्श विवाह, जाति-पाँति प्रथा तथा परंपरागत रुढियों की समाप्ति हेतु अद्‌भूत प्रयास किए एवं एक आदर्श स्वरुप समाज में प्रस्तुत किया ।
- **ऋषि परम्परा के उद्धारक** : जिन्हों ने इस युग में महान ऋषियों की महान परंपराओं की पुनर्स्थापना की । लुप्तप्राय संस्कार परंपरा को पुनर्जीवित कर जन-जन को अवगत कराया ।
- **अवतारी चेतना** : जिन्होंने "धरती पर स्वर्ग के अवतरण और मनुष्य में देवत्व के जागरण" की अवतारी घोषणा को अपना जीवन लक्ष्य बनाया और चेतना का ऐसा प्रवाह चलाया कि करोंडों व्यक्ति उस ओर चल पड़े ।

गायत्री परिवार जीवन जीने कि कला के, संस्कृति के आदर्श सिद्धांतों के आधार पर परिवार,समाज,राष्ट्र युग निर्माण करने वाले व्यक्तियों का संघ है। **वसुधैवकुटुम्बकम्** की मान्यता के आदर्श का अनुकरण करते हुये हमारी प्राचीन ऋषि परम्परा का विस्तार करने वाला समूह है गायत्री परिवार। एक संत, सुधारक, लेखक, दार्शनिक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक और दूरदर्शी युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा स्थापित यह मिशन युग के परिवर्तन के लिए एक जन आंदोलन के रूप में उभरा है।

Free Download Complete Work Of Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya, Founder of All World Gayatri Pariwar